भारत में मानसिक स्वास्थ्य सेवाओं की वास्तविक स्थिति

भूमिका

अगर आपको उलसिस एस. ग्रांट, अब्राहम लिकन, महात्मा गांधी, विस्टन चर्चिल, मार्टिन लूथर किंग जूनियर और जॉन एफ. कैनेडी के विषय में कोई एक समानता बताने को कहा जाए तो वह समानता क्या होगी? इसका एक उत्तर यह हो सकता है कि ये सभी इतिहास में स्वर्ण अक्षरों से अंकित वे नाम है जो करोड़ों लोगों के लिये न केवल प्रेरणा के स्रोत हैं, बल्कि उनके मार्ग-दर्शक भी है। इसके अतिरिक्त, इस प्रश्न का एक दूसरा उत्तर यह भी है कि ये सभी महान हस्तियाँ किसी न किसी प्रकार की मानसिक बीमारियों से पीड़ित रही हैं। इन असाधारण पुरुषों ने अवसादग्रस्तता, शराब की लत अथवा आत्मघाती संघर्षों का सामना करते हुए इतिहास को बेहतर आकार प्रदान करने का काम किया है।

कल्पना कीजिये कि यदि ये सभी महान हस्तियाँ अपनी समस्याओं से हार मान लेतीं, अपने संघर्ष को बिना परिणति तक पहुँचाए ही मैदान छोड़ देतीं तो संपूर्ण मानवता को कितना अधिक नुकसान होता? क्या हम कभी भी इस नुकसान की भरपाई कर पाते? यहाँ इन सभी को करने का उद्देश्य आपको इतिहास से रूबरू करना नहीं है, बल्कि इसका मुख्य उद्देश्य मानव के एक ऐसे पहलु से रूबरू कराना है जिसके संदर्भ में गंभीरता से विचार करके कोई भी राष्ट्र समाज को एक नया आकार प्रदान करने की क्षमता रखता है।

समाज में मानसिक रोग अभी भी एक वर्जित विषय है

वस्तुतः जिस समाज में हम रहते हैं वहाँ सार्वजनिक और निजी दोनों स्तरों पर मानसिक बीमारी (Mental illness) हमेशा से एक अपेक्षित मुद्दा रही है। इसके विषय में न केवल समाज का रवैया बेरूखा है बल्कि सरकार की दृष्टि में भी यह एक उपेक्षित विषय ही है। इन सभी बातों को ध्यान में रखते हुए कुछ समय पहले भारत सरकार द्वारा इस दिशा में कुछ सकरात्मक कदम उठाए गए हैं। इन कदमों के तहत राष्ट्रीय मानसिक स्वास्थ्य नीति, 2014 और मानसिक स्वास्थ्य सेवा अधिनियम, 2017 के माध्यम से इस परिदृश्य में बदलाव लाने की शुरुआत की गई है।

भारत जैसे देश में मानसिक बीमारी के संबंध में लाया गया यह अधिनियम कई मायनों में क्रांतिकारी हैं। इसका कारण यह है कि इस अधिनियम के अंतर्गत जिन बातों को शामिल किया गया है उनमें मुख्य रूप से रोगी-केंद्रित और प्रगतिशील दृष्टिकोण वाले प्रावधान शामिल हैं। इसके साथ-साथ, इसके अंतर्गत सेवा वितरण और प्रशासन में पारदर्शिता और व्यावसायिकता लाने संबंधी प्रावधानों को भी शामिल किया गया है।

यह और बात है कि यह अधिनियम एक वृहद् दूरगामी सोच पर आधारित है, तथापि इसके अनुपालन में जो सबसे बड़ी समस्या आ रही है वह यह कि देश में स्वास्थ्य के संबंध में पहले से बहुत सी कार्य योजनाएँ एवं पहलें विद्यमान हैं। ऐसे में कहीं ऐसा न हो कि यह अधिनियम मात्र कागज़ी शेर बन कर ही रह जाए और इसके माध्यम से जो भी कल्पनाएँ की जा रही हैं वे सभी धरी-की-धरी रह जाएँ।

जैसा कि हम सभी जानते हैं, स्वास्थ्य देखभाल के लिये पैसा खर्च करने की आवश्यकता होती है, लेकिन भारत जैसे विकासशील देश द्वारा इस संबंध में अधिक निवेश करने की कल्पना करना ही गलत है। यहाँ रोगी को बीमारी से अधिक नुकसान हो या न हो लेकिन बीमारी के इलाज में लगने वाले पैसे से अवश्य प्रभाव पड़ता है। इसका सबसे अहम कारण यह है कि एक तो यहाँ स्वास्थ्य सेवाएँ बहुत अधिक खर्चीली हैं, दूसरा, देश के प्रत्येक नागरिक तक उनकी पहुँच भी सुनिश्चित नहीं है। दुर्भाग्य यह है कि इस संबंध में देश की सार्वजनिक स्वास्थ्य प्रणाली भी कोई विशेष योगदान देने में असफल रही है।

यदि इस संदर्भ में गहराई से विचार किया जाए तो हम पाएंगे कि भारत ने कभी भी स्वास्थ्य देखभाल क्षेत्र में पर्याप्त रूप से निवेश नहीं किया है। आर्थिक सर्वेक्षण, 2016-17 के अनुसार, वर्ष 1950-51 में भारत सरकार द्वारा स्वास्थ्य पर सकल घरेलू उत्पाद का कुल 0.22% खर्च किया गया। तब से अभी तक इसमें कोई विशेष बदलाव नहीं आया है, वर्तमान में यह योगदान 1% से थोड़ा अधिक है। यदि वैश्विक संदर्भ में बात की जाए तो यह विश्व के औसतन 5.99% (विश्व बैंक, 2014 के अनुसार) की दर से बहुत कम है। वर्ष 2015 के स्वास्थ्य नीति के मसौदे में सार्वजनिक स्वास्थ्य व्यय को जी.डी.पी. के 2.5% तक बढ़ाने का प्रस्ताव पेश किया गया है। हालाँकि यह माना जा रहा है कि स्वास्थ्य पर खर्च में वर्ष 2009-10 में 1.4%, वर्ष 2013-14 में 1.2% और वर्ष 2014-15 में 1.3% की कमी आई है, जबकि वर्ष 2015-16 और 2016-17 के दौरान तो इसमें और भी कमी दर्ज़ की गई है। इन दोनों वर्षों में इसमें क्रमशः 1.15% एवं 1.18% की गिरावट दर्ज़ की गई।

ऑब्ज़र्वर रिसर्च फाउंडेशन (Observer Research Foundation-ORF) मुंबई और सी.एम.एच.एल.पी. (Centre for Mental Health Law and Policy - CMHLP) पुणे द्वारा आयोजित एक मल्टीस्टेकहॉलडर गोलमेज चर्चा में संघ और राज्य सरकारों के साथ-साथ कई जाने माने शिक्षाविदों और गैर-सरकारी संगठनों के प्रतिनिधियों ने भाग लिया। इस संपूर्ण परिचर्चा में यह बात सामने आई कि राज्य के स्तर पर इन सभी स्वास्थ्य सेवाओं को सुचारू ढंग से संचालित करने के लिये स्वास्थ्य निकायों के पास पर्याप्त कोष नहीं है। यदि कोष है भी तो उसका आवंटन सही तरीके से नहीं किया गया है। वस्तुतः धन की कमी इस संबंध में सबसे बड़ी समस्या बनी हुई है। संभवतः यही कारण है कि केवल गुजरात और केरल को छोड़कर बाकी के सभी राज्यों ने अभी मानसिक

स्वास्थ्य नीति को लागू करने के विषय में कोई विशेष रुचि प्रकट नहीं की है।

योजनाओं का अभाव

- गौरतलब है कि राष्ट्रीय मानसिक स्वास्थ्य सर्वेक्षण (National Mental Health Survey - NMHS) 2015-16 के अनुसार, भारत के अधिकांश राज्यों में मानसिक स्वास्थ्य का कुल बजट 1% से भी कम है।
- इनमें से कुछ राज्य तो ऐसे हैं जिनमें मानसिक स्वास्थ्य संबंधी दिशा-निर्देशों में स्पष्टता और संपूर्णता की कमी होने के कारण सही दिशा में धन का उपयोग नहीं किया जा रहा है।
- स्पष्ट है कि इस समस्या से निपटने के लिये मानसिक स्वास्थ्य वित्तपोषण के संबंध में स्पष्ट एवं सुव्यवस्थित दिशा-निर्देश जारी किये जाने की आवश्यकता है।
- ध्यातव्य है कि वर्तमान में केवल गुजरात और केरल दो ही राज्य ऐसे हैं जहाँ मानसिक स्वास्थ्य के लिये अलग बजट की व्यवस्था की गई है।
- वस्तुतः राज्यों को मानसिक स्वास्थ्य के लिये पृथक बजट की व्यवस्था करने के संबंध में बहुत सी परेशानियों का सामना करना पड़ता है, जिनमें मानसिक स्वास्थ्य संबंधी योजनाओं का सटीक कार्यान्वयन, पर्याप्त मात्रा में बजट की उपलब्धता, समय-सीमा, ज़िम्मेदार एजेंसियों और परिणामों की निगरानी के लिये बेहतर प्रबंधन आदि बहुत से ऐसे कारक शामिल हैं।
- एक अध्ययन के मुताबिक, मानसिक स्वास्थ्य के लिये आवंटित धन का सबसे अधिक प्रयोग कर्मचारियों के वेतन-भुगतान और दवाओं की खरीद में किया जाता है।
- इसके अतिरिक्त, ग्रामीण स्तर पर पेशेवर मनोचिकित्सकों की कमी भी देश में स्वास्थ्य सेवाओं के एक निराशाजनक पहलू को रेखांकित करती है।
- इसका एक कारण यह भी है कि सरकार द्वारा मानसिक स्वास्थ्य पेशेवरों को नियुक्त करने तथा उन्हें आवश्यक प्रशिक्षण प्रदान किये जाने के संबंध में कोई विशेष प्रबंध नहीं किया गया है। सरकार का यह उपेक्षित रवैया जहाँ एक ओर स्वास्थ्य व्यवस्था को हानि पहुँचाने का काम करता है, वहीं दूसरी ओर इससे विश्व स्तर पर देश की छवि को भी नुकसान पहुँचता है।

एन.सी.डी. के फ्लेक्सी पूल (flexi pool) में मानसिक स्वास्थ्य प्रोग्राम

- ध्यातव्य है कि मानसिक स्वास्थ्य प्रोग्राम को राष्ट्रीय स्वास्थ्य मिशन के गैर-संचारी रोगों (non-communicable diseases - NCDs) के फ्लेक्सी पूल (flexi pool) के अंतर्गत शामिल किया गया है।
- एन.सी.डी. के फ्लेक्सी पूल (flexi pool) हेतु आवंटित राशि को पिछले दो वर्षों में तकरीबन तीन गुना बढ़ाया गया है। यानी अब राज्यों द्वारा केंद्र-प्रायोजित योजनाओं के कोष का उपयोग विशेषज्ञों एवं अन्य सुविधाओं के भुगतान में किया जा सकता है।

उपरोक्त विवरण से यह तो स्पष्ट है कि एक प्रभावी मानसिक स्वास्थ्य प्रणाली को विकसित करने की दिशा में वित्तपोषण सबसे महत्त्वपूर्ण कारक होता है। स्पष्ट है कि जब तक केंन्द्र एवं राज्य के मध्य धन के आवंटन एवं उपयोग में स्पष्टता, सहयोग और ज़िम्मेदारी का भाव विकसित नही होगा तब तक मानसिक स्वास्थ्य अधिनियम में वर्णित लक्ष्यों को पूर्ण रूप से प्राप्त नहीं किया जा सकता है।

PDF Refernece URL: https://www.drishtiias.com/hindi/printpdf/reality-of-mental-health-services-in-india